वैदिक यज्ञ एवं पशुबलि-विवेचन

*डॉ. सुभाष चन्द्र शास्त्री

शोधपत्र-हिन्दी

यज्ञ वैदिक धर्म का एक आवश्यक अंग है। ऋग्वेद में यज्ञ का महत्त्व इस प्रकार बताया गया है–

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्रपूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।[1]

अर्थात् सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग यज्ञों द्वारा ही पूजनीय परमेश्वर की पूजा करते हैं। यज्ञों में सब श्रेष्ठ धर्मों का समावेश होता है। यज्ञों द्वारा भगवान् की पूजा करने वाले महापुरूष दुःखरहित मोक्ष को प्राप्त करते हैं, जहां सब ज्ञानी लोग निवास करते हैं। यज शब्द के तीन अर्थ महर्षि पाणिनि ने धातुपाठ में बताये हैं– ''यज देवपूजा, संगतिकरण और दान'' – इन्हीं तीनों में हमारे सभी कर्त्तव्य समाविष्ट हो जाते हैं। मनुष्य के प्रधानतया तीन कर्त्तव्य होते हैं–

1. अपने से बड़ों के प्रतित्र 2. समानों के प्रति 3. अपने से छोटों के प्रति यज के तीनों अर्थों में तीनों कर्त्तव्यों का स्पष्ट निर्देश है। अतः ''यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म''[2] एवं ''यज्ञो हि श्रेष्ठतमं कर्म''[3] कहा है। यज्ञ न करने वाले निरन्तर निम्नता की ओर गिरते चले जाते हैं। अतः वेद ने कहा – न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारूहम् ईर्मैव ते न्यविशन्त केपयः।[4] अर्थात् जो यज्ञमयी नौका पर चढ़ने में समर्थ नहीं होते वे कुत्सित अपवित्र आचरण वाले होकर इसी लोक में निम्नता की ओर गिरते चले जाते हैं। वेदों ने यज्ञ की महिमा इस प्रकार बताई तथा उसे परमेश्वर की पूजा और प्राप्ति का साधन बताया। बड़े दुःख की बात है कि मध्यकालीन भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने यज्ञों में पशुबलि यथा भेड़, बकरी, अश्व, बैल, गौओं की आहुति देना वेद सम्मत माना जिसे देखकर कोई भी विचारवान् व्यक्ति उस काल के वि ाय में चिन्तन कर लज्जित हुए बिना नहीं रह सकता। Vedic Age[5] में लिखा है–

Scarcely less debased than the Danastutis are the Apri hymns, manufactured artificially for employment in animal sacrifices. There is no reason doubt that these hymns were actually used at the animal sacrifices as tradition maintains.

सभी वेदों में यज्ञ के पर्याय और कहीं–कहीं विशेषण के रूप में अध्वर शब्दों का प्रयोग पाया जाता है, जिसकी व्यत्पत्ति करते हुए निरूक्तकार यास्काचार्य ने लिखा है– ''अध्वर इति यज्ञ नाम–ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रति शेधः।''[6] अर्थात् अध्वर यह यज्ञ का नाम है, जिसका अर्थ हिंसारहित कर्म है। चारों वेदों में 'अध्वर' के प्रयोग के हजारों उदाहरण है, जिनमें से निम्नलिखित कुछ का निर्देश यहां पर्याप्त है–

1. ''अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परि भूरसि।
स इद् देवेषु गच्छति।''[7]

अर्थात् हे ज्ञानस्वरूप ईश्वर! तू हिंसारहित यज्ञों में ही व्याप्त होता है और ऐसे ही यज्ञों को सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग सदा ही स्वीकार करते हैं।

2. ''राजन्तमध्वराणां गोपाम तस्य दीदिविम्।
वर्धमानं स्वे दमे।''[8]

ईश्वर अध्वर अर्थात् हिंसारहित कर्मों में विराजमान होता है जिससे पशुहिंसा निषेध है।

3.''त्वं होता मनुर्हितोऽग्ने यज्ञेषु सीदति।
सेमं नो अध्वरं यज।''[9]

यहां होता से प्रार्थना की गई कि आप हिंसारहित यज्ञ को कराओ।

4. '' स सुकतुः पुरोहितो दमे दमेग्निर्यज्ञस्याध्वरस्य चेताति कत्वा यज्ञस्य चेतति।''[10]

परमेश्वर और वेदवित् पुरोहित हिंसारहिम यज्ञ का ही मनु यों को उपदेश दें।

यजुर्वेद में पशुरक्षा विधानः

यजुर्वेद के मन्त्र भी हिंसा का स्पष्टतया नि ोध करते हैं– ''दृते दृँह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षान्ताम्। मित्रस्याहं सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।''[11]

हे अज्ञाननाशक प्रभो! मुझे सब प्राणी मित्र दृष्टि से देखें, मैं सब प्राणियों को मित्र दृष्टि से देखूं, हम सब आपस में मित्र की दृष्टि से देखें।

यजुर्वेद में प्रथम मंत्र में ही कहा – ''पशून् पाहि''[12] पशुओं की रक्षा कर। दम्पती के लिए उपदेश है–

* राजकीय महाविद्यालय, बहरोड़, अलवर

''पशूंस्त्रायेथाम्''[13] ''गां मा हिंसीरदितिं विराजम्।''[14] इत्यादि यजुर्वेद के मंत्र यज्ञ में हिंसा का निषेध कर रहे हैं।

सामवेद में अध्वर शब्दः

सामवेद में यज्ञ हेतु अध्वर शब्द का प्रयोग सैकड़ों मंत्रों में पाया जाता है–

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रारातिः सुभग भद्रोअध्वरः। भद्रा उत प्रशस्तयः।[15]

त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे। त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि यासि च वार्यम्।।[16]

सनो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वभिर्यजा महः। आ देवान् वक्षि यक्षि च।[17]

अथर्ववेद में अध्वर शब्द का प्रयोगः

अथर्ववेद में भी अध्वर शब्द का प्रयोग हिंसा रहित यज्ञ के लिए ही किया गया है–यश्चर्षणिप्रो वृषभः स्वर्विद् यस्मै ग्रावाणः प्रवदन्तिनृणाम्।

यस्याध्वरः सप्तहोता मदिष्ठः स नो मुंचत्वंहसः।।[18]

अमूर्या उपसूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह। ता नो हिन्चन्त्वध्वरम्।[19]

यज्ञ के पर्यावाची मेध शब्द को अजमेध, गोमेध, पुरुषमेध, अश्वमेध इत्यादि शब्दों को देखकर वैदिक यज्ञों में पशुहिंसा–विधान का भ्रम हुआ, यह स्पष्ट प्रतीत होता है। ''मेधृ मेधासंगमनयोर्हिंसायां च'' इस धातु के अनुसार मेधा वा शुद्ध बुद्धि को बढ़ाना, लोगों में एकता व प्रेम को बढ़ाना और हिंसा ये तीन अर्थ होते हैं। हिंसा ही उसका एक मात्र अर्थ नहीं है।

पुरूषमेध, पुरूषयज्ञ और न यज्ञ ये तीनों शब्द पर्यायवाचक हैं और मनुस्मृति में नृयज्ञ की व्याख्या– '' नृयज्ञोतिथिपूजनम्[20] इसका अर्थ यह है कि नृयज्ञ वा नृमेध से मनुष्यों को यज्ञों में बलि देना नहीं है अपितु उत्तम विद्वान् अतिथियों की पूजा, सत्कार करना है। मेध धातु संगमनार्थक से मनुष्यों का प्रेम तथा एकता हेतु संगठन बनाना नृमेध है। ातपथ ब्राह्मण में कहा गया है– ''राष्ट्रं वा अश्वमेधः। वीर्यं वा अश्वः।''[21]

अश्व शब्द वीर्यवाचक भी है। अश्व शब्द बलार्थक भी है। राष्ट्र के लोगों में दृढ़ बल एवं आत्मविश्वास बढ़ाना भी अश्वमेध का तात्पर्य है। अंग्रेजी में अश्व के पर्याय के रूप में हार्स (भ्वतेम च्वूमत) शब्द को जाना जाता है और आज विश्व की किसी भी मशीनरी अथवा पदार्थ की शक्ति को हॉर्स पावर कहकर ही मापा जाता है। अतः पुरातन ही आधुनिक दृष्टि से भी अश्व बल या शक्ति का पर्याय ही है। अज धान्यविशेषवाचक शब्द है। महाभारतकार ने कहा–

अजैर्यज्ञेषु यष्टव्यम् इति वै वैदिकीश्रुतिः।
अजसंज्ञानि बीजानि, छागान्नो हन्तुमर्हथ।।
नैष धर्मः सतां देवाः, यत्र बध्यते वै पशुः।।[22]

अब जो पुराने ब्रीहि तिल मसूर आदि है उनसे यज्ञ किया जाता है, बकरों का वध करना नहीं है। पंचतन्त्रम् में विष्णु शर्मा ने कहा है– ''वृक्षान् छित्वा पशून् हत्वा कृत्वा रूधिरकर्दमम्। यद्येवं गम्यते स्वर्गं, नरकं केन गम्यते।।[23]

जैन दर्शन के ''स्याद्वादमंजरी'' में अज का धान्यादि अर्थ किया है–''तथा हि किल वेदे अजैर्य टव्यम् इत्यादिवाक्येषु मिथ्यादृशोजशब्दं पशुवाचकं व्याचक्षते। सम्यग्द शस्तु जन्मायोग्यं त्रिवार्षिकं यवव्रीह्यादि, पंचवार्षिकं तिलमसूरादि, सप्तवार्षिकं कटसर्षपादि धान्यपर्यायतया पर्यवसाययन्ति।[24]

ऋषि लोग साक्षात्कृत धर्मा मंत्रद्रष्टा होते थे। यज्ञ में यदि किसी काल में पशुहिंसा प्रारम्भ भी की गई थी तो वह ऋषियों की नहीं अपितु अज्ञानी, अधर्मी वेदशास्त्रविरूद्ध मतावलम्बियों की थी। महाभारत में कहा गया है–

ध्रुवं प्राणिवधो यज्ञे नास्ति यज्ञस्त्वहिंसकः।
ततोहिंसात्मकः कार्यः सदा यज्ञो युधिष्ठिरः।।[25]

अर्थात् युधिष्ठिर! निश्चय से यज्ञ में पशुहिंसा विहित नहीं है। यज्ञ तो अहिंसात्मक ही होता है और उसे अहिंसात्मक रूप से ही सदा करना चाहिए। अश्वमेध से अश्वविद्या और राष्ट्र के संचालन का उपदेश है, न कि अश्वमांस की आहुति देने की। अध्वर शब्द का अर्थ–''ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिशेधः।''[26] ऋग्वेद के मंत्र का भावार्थ ऋषि दयानंद ने इस प्रकार किया है–

ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं य ईमाहु' सुरभिर्निर्हरेति।
ये चार्वतो मांसभिक्षामुपासत उतो तेषामभिगूर्तिर्न इन्वतु।।[27]

येश्वादि श्रेष्ठानां पशूनां मांसमत्तुमिच्छेयुस्ते।
राजादिभिः श्रेष्ठैः निरोद्धव्याः।।

वाममार्गी लोगों ने अज्ञानवश यह कल्पना की कि जिन पशुओं की यज्ञों में बलि दी जाती है वे स्वर्ग को जाते हैं और यजमान भी ऐसे यज्ञ कराने पर स्वर्ग को जाता है। किन्तु यह युक्ति बुद्धिविरूद्ध और अन्धविश्वास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इस प्रकार वैदिक साहित्य के किसी भी ग्रंथ का अध्ययन करने से यज्ञों में किसी प्रकार की पशुबलि की मान्यता दृष्टिगोचर नहीं होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 ऋग्वेद–10.90.16 2 शतपथ– 1.7.3.5 3 तैत्तिरीय–3.2.1.4 4 ऋग्वेद–10.44.6 तथा अथर्ववेद– 20.94.6 5 The Vedic Age, Page 348. 6 निरूक्त– 2.7 7 ऋग्वेद–1 कृ1.4 8 ऋग्वेद–1.1.8 9 ऋग्वेद–1.14.21 10 ऋग्वेद–1.128.4 11 यजुर्वेद–36.18 12 यजुर्वेद–1.1 13 यजुर्वेद–6.11 14 यजुर्वेद–13.43 15 सामवेद पूर्वार्द्ध– 2.2.5 16 सामवेद पूर्वार्द्ध– 2.2.6 17 सामवेद उत्तरार्द्ध– 6.3.4.2 18 अथर्ववेद– 4.24.3 19 अथर्ववेद– 1.4.02 20 मनु. 3.70 21 शतपथ–13.1.6 22 म.भा. शान्तिपर्व, अ. 337 23 पंचतंत्र, काकोलूकीयम् 24 स्याद्वादमंजरी– प .– 175 लोक– 23 25 शान्तिपर्व, अ. 337 26 निरूक्त– 1.7 27 यजुर्वेद– 25.35